प्रथम अध्याय

प्रस्तावना

Regional Institute of Education
LIBRARY
Bhopal

अध्याय : प्रथम

1.1 भूमिका :-

संविधान के प्रवेशिका में भारत को जनतंत्र राज्य के रूप में निर्मित करने का निश्चय किया गया है। आधुनिक युग में जनतंत्र का उदय पश्चिमी देशों में मार्क्सवाद के सिद्धान्तों के प्रगति के साथ हुआ। इस सिद्धान्त में व्यक्तिगत आर्थिक हितों को नकारा गया है। बाद में जनतंत्र, राजकीय संचालन के लिये पर्याप्त बन गई और वर्तमान के लिये पर्याप्त बन गई और वर्तमान समय में जनतंत्र जीवन की एक पद्धति के रूप में विकसित हो गई है, जो कि भारत जैसे देश में निरक्षरों की संख्या विपूल मात्रा में है। लोग जनतंत्र के प्रति शंकाशील है और उसके प्रति अपनी नाराजगी व्यक्त करते हैं। क्योंकि जागृत नागरिक जनतंत्र का आधारस्तम्भ है। जनतंत्र को सफलतापूर्वक निरन्तर बनाये रखने के लिये विद्यार्थियों में जागरूकता लाना अत्यंत आवश्यक है। शिक्षकों में जनतंत्र मूल्य होना आवश्यक है।

जनतंत्र में जनता का राज्य होता है। बहुधा वयस्क मताधिकारी द्वारा जनता के प्रतिनिधियों का चुनाव किया जाता है और ये प्रतिनिधि ही सरकार को चलाते है। जनतंत्र के आदर्श है, स्वतंत्रता समानता भ्रातत्व। जनतंत्र राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक समानता स्थापित करता है। उसमें उसके व्यक्ति को विचार प्रकट करने समितियाँ बनाने और किसी भी प्रकार के वैधानिक कार्य में शामिल होने का अधिकार होता है। जनतंत्र का अंतिम उद्देश्य केवल सरकार की सफलता नहीं बल्कि एक ऐसा आदर्श समाज स्थापित करना है जिसमें लोगों में भाई-चारे का अधिक से अधिक विकास हो सके। जनतंत्र ऐसी परिस्थितियाँ उपस्थित करता है जिनमें मानव के व्यक्तित्व का अधिकतम और सर्वोच्च विकास हो सके। सन् "1776" की अमरीका की आज़ादी की घोषणा में जनतंत्र के सिद्धांतों को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया गया था, ''हम इन सत्यों को स्वयं सिद्ध मानते है कि सब मनुष्य समान बनाये गये है, कि इनमें जीवन, स्वतंत्रता और आनंद की खोज भी है, कि इन अधिकारों को प्राप्त करने के लिए सरकारें बनाई गई है जो अपने न्यायोचित अधिकार शासितों की सहमति से प्राप्त करती है''। मनुष्य अपने अधिकारों के विषय समान उत्पन्न हुए है और रहेंगे/राजनैतिक समाज का लक्ष्य मनुष्य के प्राकृतिक और अप्रत्यक्ष अधिकारों की रक्षा करना है। ये अधिकार हैं - स्वतंत्रता, सम्पत्ति, सुरक्षा और अत्याचार का विरोध। ''समस्त सत्ता का तत्व मूल रूप से राष्ट्र में निहित है। कोई भी संगठन कोई भी व्यक्ति किसी ऐसी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता जो कि उसे स्पष्ट रूप से प्राप्त न हुई हो''।

जनतंत्र का अंग्रेजी पर्याय शब्द डेमोक्रेसी (Democracy) ग्रीक शब्दों का डेमोस (Demos) और क्रेटीन (Kratein) से मिलकर बनता है। डेमोस का अर्थ है जनता और क्रेटीन से तात्पर्य है शासन। इस प्रकार डेमोक्रेसी का अर्थ जनता का शासन है। डेमोक्रेसी के पीछे दी गई व्यवस्था से भी यही स्पष्ट होता है।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

सर स्टेफोर्ड क्रिप्स के अनुसार ''जनतंत्र से हमारा तात्पर्य सरकार की एक व्यवस्था से है जिसमें कि प्रत्येक वयस्क नागरिक अपने मनचाहे तरीके से समस्त विषयों पर अपने विचार और इछाएं अभिव्यक्त करने के लिये अपने साथी नागरिकों के बहुमत को प्रभावित करता है जिससे कि इन इच्छाओं पर अमल किया जा सके।''

जहाँ तक जनतंत्रीय राज्य को परिभाषा का प्रश्न है, किप्स द्वारा दी गई यह परिभाषा उचित है किंतु फिर दूसरी और जैसा कि डॉ. राधाकृष्णन ने अपनी प्रसिद्ध विश्वविद्यालय रिपोर्ट में लिखा है, जनतंत्र केवल राजनैतिक व्यवस्था मात्र नहीं है बल्कि जीवन की एक प्रणाली है, वह प्रजाति, धर्म, लिंग और आर्थिक स्थिति है।

1.2 शिक्षक का महत्व :-

भारतीय समाज में गुरू का सर्वोच्च स्थान है, क्योंकि वह शिक्षा के माध्यम से समाज को विकासोन्मुख बनाता है। अतः शिक्षा के उद्देश्य देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होते रहते है, जो समाज की परिवर्तित आवश्यकताओं के पूरक होते है। शिक्षा हमें इस योग्य बनाते है कि परिस्थितियों के अनुरूप उचित निर्णय लेकर सही मार्ग का चयन करें और जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न अवसरों पर सही विकल्प का चुनाव कर सकें।

किसी भी राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली में सबसे महत्वपूर्ण स्थान शिक्षक का होता है। शाला की उन्नति अथवा विकास के लिए उचित पाठ्यक्रम, श्रेष्ठ पाठ्य-पुस्तकें, उत्तर शिक्षा साधन तथा उपयुक्त शालागृहों की आवश्यकता तो है ही परंतु उससे कहीं ज्यादा

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

आवश्यकता है उपयुक्त अध्यापकों तथा अध्यापिकाओं की। वही शिक्षा पद्धति को चलाते हैं। अच्छे शिक्षकों के अभाव में किसी भी देश की शिक्षा पद्धति निर्जीव और निस्तेज हो जाती है। इसी तथ्य को समझकर प्राचीन भारत में शिक्षकों को एक विशिष्ट स्थान था। लेकिन अंग्रेजों के शासन काल में अध्यापकों की स्थिति सोचनीय हो गई। इसीलिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सरकार द्वारा नियुक्त राधाकृष्णन आयोग, मुदलियार आयोग तथा कोठारी आयोग आदि ने इस बात पर बल दिया कि अध्यापकों की आर्थिक सामाजिक और व्यावसायिक दशाओं को सुधारे बिना शिक्षक का उत्तरदायित्व अपूर्ण ही रहेगा। देश के सारे शिक्षा शास्त्री विद्वान, राजनीतिज्ञ और प्रशासक यह स्वीकार करते हैं कि देश जिस संकटकालीन दौर से गुजर रहा है उसमें अध यापक ही उसे सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

बालक के सर्वांगीण विकास में शिक्षक को बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य करना पड़ता है। शिक्षक ही वास्तव में बालक का समुचित शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास कर सकता है। विद्यालय – प्रांगण में भी शिक्षक को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी पड़ती है। समपूर्ण विद्यालय योजनाओं को वही व्यावहारिक रूप देता है। अच्छी से अच्छी शिक्षण पद्धति प्रभाव रहित हो जाती है यदि शिक्षक उसे सही ढंग से प्रयोग न करें। जिस प्रकार विद्यालय जीवन में प्रधानाध्यापक मस्तिष्क के रूप में होता है, शिक्षक आत्मा स्वरूप होता है। आत्मा के बिना शरीर (विद्यालय) निर्जीव होता है। शिक्षक ही विद्यालय जीवन का गतिदाता है। उपयुक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि विद्यालय जीवन में शिक्षक को अति महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। शिक्षक को विद्यालय जीवन में ही क्यों सम्पूर्ण समाज में अति महत्वपूर्ण एवं सम्मानप्रद स्थान प्राप्त है। यह महत्व निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट होता है।

Regional Institute of Education
LIBRARY
Bhopal

(i) भविष्य निर्माता :-

डॉ. जाकिर हुसैन के अनुसार, वास्तव में शिक्षक हमारे भाग्य-निर्माता है। समाज अपने ही विनाश पर उनकी उपेक्षा कर सकता है, प्रो. हुमायुँ कबीर ने लिखा है, शिक्षक राष्ट्र के भाग्य निर्णायक होते है, वे ही पुनः निर्माण की कुंजी है।

(ii) राष्ट्र का मार्गदर्शन :-

डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार शिक्षक राष्ट्र के भाव्य के मार्गदर्शक है। शिक्षक बौद्धिक परम्पराओं तथा तकनीकी कौशलों की पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण करने में धुरी का कार्य करता है। वह सभ्यता एवं संस्कृति का संरक्षक तथा परिमार्जनकर्ता है। वह बालक का ही मार्गदर्शक नहीं वरन् सम्पूर्ण राष्ट्र का मार्गदर्शन है।

(iii) राष्ट्र की उन्नति में स्थान :-

अध्यापक का राष्ट्र की प्रगति में महत्वपूर्ण स्थान है। कहा भी जाता है कि "एक आदमी हत्या करके एक ही जीवन का अंत करता है किंतु शिक्षक अपने समुचित शिक्षण से ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करते है जो राष्ट्र की प्रगति के आधार पर होते है।

(iV) संस्कृति का पोषक :-

गारफोर्थ के शब्दों में, शिक्षक के माध्यम से ही संस्कृति पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती हैं समाज की परंपराओं नवयुवकों को ज्ञान प्राप्त होता है तथा वहीं नये एवं रचनात्मक उत्तरदायित्व ऊर्जायें छात्रों को सौंपता है। शिक्षक संस्कृति का परिमार्जक एवं रक्षक है।

(V) शिक्षा का रक्षक :-

समाज में प्रचलित शिक्षा का रक्षक भी शिक्षक ही होता है। वास्तव में कोई भी शिक्षा व्यवस्था शिक्षकों के स्तर से ऊपर नहीं जा सकती है। जिस स्तर से ऊपर नहीं जा सकती है। जिस स्तर के

शिक्षक होंगे उसी स्तर की शिक्षा व्यवस्था होगी। शिक्षा की गुणात्मक स्थिति शिक्षकों की स्थिति तथा उनके गुणात्मक पहलू पर निर्भर है।

वास्तव में बालक के शारीरिक मानसिक तथा सामाजिक व नैतिक विकास में शिक्षक बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका रखता है। वह अपने सदप्रयासों से बालक का सफल मार्गदर्शन कर उसके व्यक्तित्व का संतुलित विकास कर उसे सफल नागरिक बनाता है। इस रूप से वह न केवल बालक का ही कल्याण करता है, वरन् समूचे समाज तथा राष्ट्र की भलाई करता है। इसलिए तो भारतीय दर्शन में उसे ब्रह्म स्वरूप शिक्षक ही सृजनात्मक तथा विध्वंसात्मक शक्तियों का प्रदाता तथा स्त्रोत है। इसी की प्रदत्त शिक्षा के आधार पर हम कल्याणकारी तथा विनाशकारी शक्तियों का निर्माण करते है। इसीलिए कहा जाता है कि यदि विनाश पर आ जाये तो शिक्षक एक चिकित्सक, भवन निर्माण तथा पुजारी से भी अधिक विनाश कर सकता है। एक अध यापक के प्रभाव का कहाँ अंत होगा। कहा नहीं जा सकता क्योंकि वह अपने छात्रों पर अपने प्रभावों की अमिट छाप छोड़ देता है।

अध्यापक के उत्तरदायित्व निम्नलिखित हैः-

1. छात्रों का शैक्षिक एवं चारित्रिक विकास करना।
2. कक्षा का प्रबंध एवं समुचित शिक्षण देना।
3. छात्रों को कार्यो का मूल्यांकन करना।
4. पाठ्यक्रमों - सहगामी क्रियाओं का संचालन करना।
5. सामाजिकता एवं नागरिकता की शिक्षा देना।
6. छात्रों का व्यवसायिक विकास करना।

1.3 भारतीय संविधान और राष्ट्रीय मूल्य :-

जीवन मूल्यों के स्वरूप निर्धारण संबंधी मार्गदर्शन की दृष्टि से हमारे संविधान की प्रस्तावना विशेष महत्वपूर्ण है। यह प्रस्तावना उन

उद्देश्यों आदर्शों और सिद्धांतों का वर्णन करती है। जिसके प्रकाश में हमारा संविधान निर्मित हुआ है।

शिक्षा निति के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु हमारी शिक्षण प्रद्धति का मूल्य परक होना वांछनीय ही नहीं अपितु अनिवार्य भी प्रतीत होता है। नई शिक्षा निति के एक प्रस्ताव में ठीक ही कहा गया है कि हमारे संविधान की प्रस्तावना एवं उपयुक्त चार राष्ट्रीय लक्ष्यों को रेखांकित करने वाले बुनियादी एवं अभिष्ट मूल्य हमारी मूल्य परक शिक्षा का आधार बनने चाहिए और इस मूल्य परक शिक्षा की और आवश्यक ध्यान एवं समय देना चाहिऐ।

1.4 जनतंत्र की परिभाषा : (Definition of Democracy)

जनतंत्र के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम निम्नलिखित परिभाषायें दे रहे हैं।

(1) अरस्तु – ''जनतंत्र जनता की सरकार है''

(2) लार्ड ब्राइस – ''जनतंत्र एक ऐसी सरकार है जिसमें शासन करने की शक्ति किसी व्यक्ति अथवा वर्ग के हाथों में न रहकर समस्त जनता के हाथों में सामूहिक रूप से होती है''

(3) सीले – ''जनतंत्र वह सरकार है जिसमें सब भाग लेते है''

(4) बोडे – ''जनतंत्र जीवन–यापन की एक रीती है और जीवन–यापन की रीति का तात्पर्य है – जीवन के प्रत्येक प्रमुख क्षेत्र को प्रभावित करना।''

(5) राधाकृष्णन विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग – ''जनतंत्र जीवन–यापन का एक ढ़ंग है न कि केवल एक राजनीतिक व्यवस्था। वह उन अधिकारों तथा स्वतंत्रता के सिद्धातों पर आधारित रहता है जो किसी अमुक जाति, धर्म, लिंग तथा आर्थिक स्थिति के भेद–भावों से ऊपर उठकर सबके ऊपर समान रूप से लागू होते हो।''

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

(6) मेजिनि – सच्चे जनतंत्र का तात्पर्य है – ''सबसे योग्य सबसे अच्छे नेतृत्व में सबकी सबके द्वारा उन्नति।''

(7) अब्राहम लिंकन – '' जनता के लिए जनता द्वारा जनता की सरकार के रूप में।''

Regional Institute of Education LIBRARY

1.5 'मूल्य' की परिभाषा :–

पाश्चात्य जगत् के विद्वानों ने मूल्य को भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है। दृष्टिकोणों की भिन्नता के कारण जी.ई. मूर तथा चालर्स नौरिस ने तो यहाँ तक कहा है कि 'मूल्य' शब्द की परिभाषा नहीं की जा सकती।

'मूल्य' वह है जिसका महत्व है, जिसको पाने के लिए व्यक्ति और समाज चेष्टा करते है, जिसके लिये वे जीवित रहते है और जिसके लिये वे बड़े से बड़ा त्याग कर सकते है।

(1) दार्शनिक दृष्टिकोण – अर्बन ने मूल्य की परिभाषा इस प्रकार दी है ''मूल्य वह जो मानव–इच्छाओं की तुष्टि करें''

जेम्स वार्ड का मत है कि इच्छा का स्वयं कोई मूल्य नहीं। मूल्य इच्छा की तृष्टी करने वाली वस्तुयें है।

इच्छा की पूर्ति से सुख होता है। अतः सुखानुभूति में मूल्य की अनुभति है।

मैकन्जी ने सुख को भली प्रकार मूल्य की अनुभूति के रूप में बताया है।

(1) अध्यात्मिक दृष्टिकोण :– यह दृष्टिकोण सुध को मूल्य का मानदण्ड न मानकर आन्तरिक एवं साध्य मूल्यों को मुख्य मूल्य मानता है और साधन मूल्यों को गौण मानता है।

(2) साधन मूलय एवं साध्य मूल्य :– राईट के अनुसार साध्य था आन्तरिक मूल्य अपने कारण मूल्यवान है जबकि साधन मूल्य

अपने परिणाम के कारण मूल्यवान है।

1.6 जनतंत्र के मूलतत्व :-

सर स्टेफोर्ड क्रिप्स के अनुसार ''जनतंत्र से हमारा तात्पर्य सरकार की एक व्यवस्था से है जिसमें कि प्रत्येक वयस्क नागरिक अपने मन चाहे तरीके से समस्त विषयों पर अपने विचार और इच्छाएं अभिव्यक्ति करने के लिये अपने साथी नागरिकों के बहुमत को प्रभावित करता है। जिससे कि इन इच्छाओं पर अमल किया जा सके।''

जहाँ तक जनतंत्रीय राज्य को परिभाषा का प्रश्न है किप्स द्वारा दी गई यह परिभाषा उचित है किंतु फिर दूसरी ओर जैसा कि डॉ. राधाकृष्णन ने अपनी प्रसिद्ध विश्वविद्यालय रिपोर्ट में लिखा है जनतंत्र केवल राजनैतिक व्यवस्था मात्र नहीं है। बल्कि जीवन की एक प्रणाली है वह प्रजाति, धर्म लिंग और आर्थिक स्थिति का ध्यान न करते हुए सभी को समान स्वतंत्रता और समान अधिकारों के सिद्धांत पर आध ाारित है। वास्तव में जनतंत्र एक व्यापक प्रत्यय है जिसको राजनैतिक, सामाजिक, और आर्थिक तीनों अर्थो में लिया जाता है। इन तीनों ही क्षेत्रों में जनतंत्रीय आदर्श स्वतंत्रता समानता और भ्रातृत्व को लागू करना ही जनतंत्र की स्थापना है।

अस्तु, इन क्षेत्रों में जनतंत्र की विस्तृत व्याख्या करने के पूर्व उसके इन मूल तत्वों की व्याख्या आवश्यक है।

(1) स्वतंत्रता (Liberty)

स्वतंत्रता जनतंत्र में सफलता की एक मौलिक शर्त है। आन स्टुअर्ट मिल व्यक्ति की स्वतंत्रता को सबसे अधिक मूल्यवान मानता था परंतु स्वतंत्रता का अर्थ यह नहीं है कि कोई भी व्यक्ति चाहे जो कुछ करे। स्वतंत्रता निरंकुशता नहीं है, उसमें आत्म-नियंत्रण करने पर जोर दिया जाता है। जिसका संबंध दूसरों से या समाज से है। स्वतंत्रता का अर्थ यह है कि व्यक्ति अपने आत्मा का पूर्ण विकास कर

सकता है और उसका साक्षात्कार करने में उस पर कोई बंधन नहीं है। सबकी स्वतंत्रता के लिए यह आवश्यक है कि किसी के हाथ में असीम अधिकार न हो और कोई अपने अधिकारों का दुरूपयोग न कर सके।

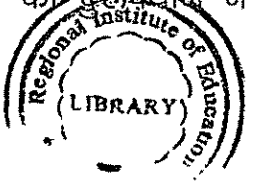

(2) समानता (**Equiality**)

जनतंत्र की सफलता के लिए जनतंत्र में सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक जीवन में समानता की आवश्यकता है। सामान्य रूप से जनतंत्र में किसी भी व्यक्ति अथवा वर्ग को विशेषाधिकार नहीं दिये जाने चाहिये। परंतु समानता का तात्पर्य यह नहीं है कि योग्यताओं तथा अन्य बातों के आधार पर कोई भेद ही नहीं किया जाना चाहिए। वास्तव में समानता का असली रूप अवसर की समानता है। समानता के नाम पर लोगों में तरह-तरह के भेद नहीं हटाये जा सकते, लार्ड हलेडन ने ठीक ही लिखा है कि "आप सब आदमियों को समान नहीं बना सकते क्याकि प्रकृति बहुत अधिक शक्तिशाली है। एक स्त्री सुन्दर उत्पन्न होती है और दूसरी कुरूप ओर इससे बड़ा भारी अन्तर पड़ जाता है। समानता के उस अपूर्व विचार को निकाल दीजिए। वह एक पुरानी धारणा है जो अनेक लोगों पर छा रही है।" जनतंत्र में कुछ वर्गों को कुछ समय के लिए कुछ विशेषाधिकार दिये जा सकते है। परंतु ये अपवाद ही होने चाहिये। इस प्रकार राज्य में सभी पद उन सब लोगों के लिए खुले होने चाहिये जिनमें आवश्यक सामर्थ्य और योग्यतायें है। मतदान का अधिकार सभी वयस्कों को काम मिलना चाहिये और काम से एक उत्तम मानव जीवन व्यतीत करने के योग्य वेतन मिलना चाहिये। बेरोजगारी, भुखमरी और जीवन की अस्वास्थ्यकर दशायें जनतंत्र के लिए द्योतक है।

(3) भ्रातृत्व (**Fraterity**) जनतंत्र की सफलता के लिए मनोवैज्ञानिक कठिनाईयों को दूर करने के लिए जनतंत्र के सर्वश्रेष्ठ आदर्श भ्रातृत्व को प्राप्त करना सबसे अधिक जरूरी है। असली समस्या जनतंत्रीय

सरकार जनतन्त्रीय समाज की स्थापना एक साधन मात्र है। जनतंत्रीय समाज का सबसे मुख्य लक्षण भ्रातृत्व है। सहकारिता जनतंत्रीय समाज की स्थापना के लिए जनता में हर तरह से भाई–चारा बढ़ाने की चेष्टा की जानी चाहिये। जी.डी.एच. कोल ने ठीक ही लिखा है, ''एक जनतंत्रीय व्यक्ति वह है जो उसके पास जो कोई भी ईमानदारी से सहानुभूति और सहायता के लिए जाता है। उनमें से प्रत्येक को सहानुभूति और प्रेम का प्रकाश दिखलाता है। जब तक कोई व्यक्ती इस प्रकार जनतंत्रीय समाज की स्थापना के लिए व्यक्तियों के विचारों व्यक्तियों और व्यवहार में परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है इसके लिए उनका सर्वांगीण विकास आवश्यक है। उन्मुक्त मस्तिष्क सहानुभूति और प्रेम तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना और उच्च चरित्र तथा विकसित व्यक्तित्व के बिना जनतंत्र की कल्पना नहीं की जा सकती।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

1.7 जनतंत्र के विभिन्न पहलू

(1) राजनैतिक जनतंत्र (Political Democracy)

जैसा कि पीछे बतलाया जा चुका है, जनतंत्र के आदर्शों को राजनैतिक सामाजिक और आर्थिक विभिन्न क्षेत्रों में प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। राजनैतिक पहलू में जनतंत्र की व्याख्या लॉर्ड ब्राइस के इन शब्दों में की जा सकती है। ''जनतंत्र सरकार का एक प्रकार है जिसमें एक राज्य की प्रशासन शक्ति किसी भी विशिष्ट व्यक्ति अथवा वर्ग में नहीं बल्कि सम्पूर्ण समुदाय में निहित होती है।'' जनतंत्र में कानूनी दृष्टि से सभी नर–नारी बराबर माने जाते है। कानून और न्याय सबके लिए एक सा होता है। यद्यपि जनतंत्रीय सरकार बहुमत वालों की होती है किंतु अल्पसंख्यकों के अधिकारों का सब प्रकार से रक्षा की जाती है।

नागरिकों को चिंतन और विचार व्यक्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता दी जाती है, और लिंग, प्रजाती, धर्म, अथवा किसी भी अन्य

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

विशिष्टता के आधार पर नागरिकों में अंतर नहीं किया जाता।

(2) सामाजिक जनतंत्र (Social Democracy)

सामाजिक क्षेत्र में जनतंत्र समाज के विभिन्न व्यक्तियों में समानता और मातृत्व पर बल देता है। डिबी के अनुसार ऐसे समाज में ऐसी शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे व्यक्तियों को सामाजिक संबंध और नियंत्रण में व्यक्तिगत रूचि तथा मन की ऐसी आदतें मिलें जो कि अव्यवस्था उत्पन्न किए बिना सामाजिक परिवर्तन उत्पन्न करती है। '' जनतंत्र की सामाजिक भावना प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक इमैनुएल काल के इस नैतिक सूत्र से मालुम होती है इस प्रकार कार्य करो मानवता को चाहे वह तुम्हारे अपने व्यक्तित्व में हो अथवा किसी दूसरे के व्यक्तित्व में, सदैव साध्य के रूप में प्रयोग करो कि मानवता को चाहे वह साध्य के रूप में प्रयोग करो साधन के रूप में नहीं।'' इस सूत्र से काष्ट व्यावहारिक क्षेत्र में यह नियम निकालता है कि सदैव अपने को पूर्ण करने की चेष्ट करो और अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न करके दूसरों को सुखी बनाने की चेष्ट करो क्योंकि तुम उन्हें पूर्ण नहीं बना सकते।'' वास्तव में जनतंत्रीय व्यक्ति साध्यों के एक विशेष राज्य के सदस्य के रूप में काम करता है। साध्यों का यह राज्य जनतंत्रीय आदर्शों का राज्य है। काष्ट ने एक अन्य महत्वपूर्ण नैतिक सूत्र इस प्रकार रखा है, ''एक साध्यों के राज्य के सदस्य के रूप में काम करो। इसका अर्थ है इस प्रकार कार्य करो कि स्वयं को और प्रत्येक अन्य व्यक्ति को आन्तरिक मूल्य वाला समझकर व्यवहार करो एक ऐसे समाज दूसरे के शुभ को अपने से समान मूल्य का समझता हो और उसके साथ बाकी लोग भी उसी प्रकार व्यवहार करें जिसमें कि प्रत्येक साध्य और साधन दोनों हों जिसमें कि दूसरे के शुभ की वृद्धि करते हुए प्रत्येक अपना शुभ प्राप्त करें।''

(3) आर्थिक जनतंत्र (Economic Democracy)

जनतंत्र के आर्थिक पहलू में आर्थिक स्वतंत्रता और समानता

के अधिकार निहित है। जनतंत्रीय राज्यों में प्रत्येक नागरिक को दूसरों के अधिकारों में किसी प्रकार से बाधा न डालते हुए धन कमाने का अधिकार है। धनोपार्जन की यह स्वतंत्रता समानता के अधिकार से सीमित होती है क्योंकि धनोपार्जन की स्वतंत्रता होते हुए भी जनतंत्रीय समाज में किसी भी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं होता कि वह उत्पादन के साधनों पर इस तरह से अधिकार कर ले कि दूसरों की आर्थिक स्वतंत्रता में बाधा पड़े अथवा इतना अधिक धन एकत्रित कर ले कि अन्य व्यक्तियों और उसकी आर्थिक स्थिति में जमीन आसमान का अंतर हो जाए। समानता के अधिकार को बनाये रखने के लिये जनतंत्रीय राज्यों में श्रमिकों के विभिन्न वर्गो तथा समाज के पिछड़े हुए लोगों के अधिकारों की रक्षा करने के लिए कानून बनाये जाते है। जनतंत्र पूँजीवाद के विरूद्ध है। उसके समाज के विभिन्न अंगों में अत्यधिक आर्थिक अंतर कभी भी उचित नहीं माना जाता। मातृत्व के आदर्श के कारण जनतंत्र किसी भी प्रकार के आर्थिक शोषण के विरूद्ध है।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

1.8 जनतंत्र में शिक्षा की आवश्यकता :-

आलडस ने लिखा है, ''यदि तुम्हारा उद्देश्य स्वतंत्रता और जनतंत्र है, तब तुम्हे जनता को स्वतंत्र होने और स्वयं अपना शासन करने की शिक्षा देनी पड़ेगी।'' शिक्षा के बिना जनतंत्र में सफलता नहीं मिल सकती। जहाँ कहा जनतंत्रीय सरकार असफल हई है वहाँ इसका कारण अशिक्षा ही रही है। चूँकि जनतंत्र में सरकार के सदस्य जनता द्वारा चुने जाते है इसलिए जब तक जनता शिक्षित नहीं होगी तब तक उपयुक्त नेताओं के चुनाव की आशा नहीं की जा सकती। जब किसी जनतंत्र के नागरिक को अपने अधिकारों और कर्तव्यों का पता ही नहीं होगा तो वह उनके अनुसार व्यवहार ही कैसे कर सकता है। बटैण्ड रसल ने ठीक ही लिखा है, ''अपने-वर्तमान रूप में जनतंत्र किसी भी राष्ट्र में बिलकुल असंभव है जहाँ पर बहुत से लोग पढ़ नहीं सकते।''

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

सच तो यह है कि जनतंत्र के लिए शिक्षा एक पूर्ण आवश्यकता है। नागरिकों को पर्याप्त शिक्षा देने के बाद ही उन्हें जनतंत्रीय अधिकार दिये जाने चाहिए। जैसा कि जर्मनदार्शनिक फिख्टे ने ठीक ही लिखा है, ''जिस राष्ट्र में यथार्थ व्यवहार में पूर्व व्यक्तियों को शिक्षा देने की समस्या को सुलझा सकेगा।'' यदि जहाँ पर फिख्टे का तात्पर्य एकतंत्रवादी आदर्श से मानी जाए तो भी उसको प्राप्त करने के पहले नागरिकों की शिक्षा आवश्यक है। हैदरिंगटन के शब्दों में ''जनतंत्रीय सरकार शिक्षित जनता की माँग करती है।'' सन् 1949 के भारतीय विश्वविद्यालय आयोग में विश्वविद्यालय शिक्षा के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए डॉ. राधाकृष्णन ने इस बात पर जोर दिया था कि जनतंत्रात्मक राज्य में व्यक्ति के महत्व को स्वीकार किया जाता है और व्यक्ति के विकास की प्रक्रिया शिक्षा है। अस्तु जनतंत्रीय समाज की स्थापना के लिए शिक्षा आवश्यक है। डिवी के अनुसार बिना शिक्षा के लोकतंत्र की कल्पना नहीं की जा सकती। शिक्षा ही व्यक्तियों में उन गुणों का निर्माण करती है जो लोकतंत्र के लिए आवश्यक है। प्राचीन युनान नगर के राज्यों में दार्शनिक शिक्षा के इस महत्व से भली-भांति परिचित थे। प्लेटों और अरस्तू दोनों ने ही जनतंत्र की सफलता के लिए शिक्षा के महत्व पर ध्यान दिया है। अनेस्ट बारकर के अनुसार ''प्लेटो के लिए शिक्षा राज्य का सबसे महत्वपूर्ण कार्य था और शिक्षा विभाग राज्य का सबसे महत्वपूर्ण विभाग जो कि विशेष रूप से नैतिक प्राणी बनने के लिये मनुष्यों के मस्तिष्क का विकास करने के लिए और दार्शनिक राजाओं को उत्पन्न करने के लिए बनाया गया था।'' अपनी प्रसिद्ध पुस्तक रिपब्लिक में प्लेटो ने न केवल जनतंत्र में शिक्षा के महत्व पर जोर दिया है बल्कि नर-नारियों के लिए एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था की योजना प्रस्तुत की है जिससे उनका शारीरिक, मानसिक, नैतिक और सौन्दर्यात्मक सभी प्रकार का सर्वांगीण और समन्वित विकास संभव हो सके अरस्तू के अनुसार राज्य का लक्ष्य जीवन का लक्ष्य जीवन का उच्च नैतिक स्तर पर प्राप्त

करना है जो कि शिक्षा के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार शिक्षा राज्य का सबसे महत्वपूर्ण कार्य हैं वास्तव में राज्य स्वयं नागरिकता की शिक्षा का विद्यालय है। अरस्तू के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य अच्छे नागरिकों अर्थात अचछे व्यक्तियों को उत्पनन करना है। प्राचीन युनान में ही नहीं किंतु प्राचीन भारत में भी विचारकगण जनतंत्रीय आदर्शों से परिचित थे। भारत में अति प्राचीनकाल से ही जनतंत्रीय आदर्श पलते रहे है। आचार्य कुलों गुरूकुलों और आश्रमों में व्यक्ति को सर्वांगीण शिक्षा देकर समाज का उपयुक्त सदस्य बनाने का प्रयास किया जाता था। प्राचीन युनान और भारत में जनतंत्र में शिक्षा की जितनी आवश्यकता थी उससे कहीं अधिक आवश्यकता आधुनिक जनतंत्र में है क्योंकि वे इतने विशाल हैं कि उनमें समस्यायें और भी जटिल है जिनको सुलझाने के लिए नागरिकों को शिक्षित होने की और भी अधिक आवश्यकता है।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

1.9 जनतंत्र में शिक्षा का महत्व :-

जनतंत्र में शिक्षा की आवश्यकता के उपरोक्त विवेचन से जनतंत्र में शिक्षा का महत्व स्पष्ट होता है। इस संबंध में निम्निलिखित बांते कही जा सकती है :-

(1) अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान :-

जनतंत्र की सफलता के लिए प्रत्येक नर-नारी को अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान शिक्षा के माध्यम से मिल सकता है। शिक्षा द्वारा व्यक्ति का सामाजिककरण होता है जिससे उसमें कर्तव्य भावना उत्पन्न होती है।

(2) मानवीय गुणों का विकास :-

जनतंत्र में मातृत्व के आदर्श को प्राप्त करने के लिए नागरिकों में मानवीय गुणों का विकास करना आवश्यक है। इस संबंध में पीछे काण्ट द्वारा बतलाये गये नैतिक सूत्रों से महत्वपूर्ण प्रकाश

पड़ता है। शिक्षा के द्वारा ही नागरिकों में उच्च नैतिक चरित्र, सामाजिकता, सहिष्णुता धैर्य, सहध्यता, सहानुभूति और मातृत्व के गुण उत्पन्न किये जाते है।

(3) जनतंत्रीय आदर्शो में आस्था :-

जनतंत्र की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि नागरिकों में जनतंत्रीय आदर्शों में आस्था हो, यह तभी हो सकता है जब कि ये पर्याप्त रूप से शिक्षित हो क्योंकि शिक्षित व्यक्ति ही यह समझता है कि मानव जीवन का लक्ष्य केवल भौतिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करना मात्र नहीं है। स्वतंत्रता का आदर्श उससे भी ऊँचा है, मातृत्व की भावना उससे भी अधिक आवश्यक है। शिक्षित व्यक्ति ही अन्य व्यक्तियों की परिस्थितियों और आवश्यकतों को समझकर तथा साध्य के रूप में मानव के मूल्य को पहचानकर समानता के आदर्श को अपना सकता है।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

(4) राजनैतिक कर्तव्यों का पालन :-

चूँकि में सरकार, जनता द्वारा चुनी जाती है इसलिए जब तक नागरिकों में अपने राजनैतिक अधिकारों को समझने और उनका पालन करें। मुधलियर रिपोर्ट के अनुसार यदि प्रजातंत्र का अर्थ आँख बंद करके वोट देने से कुछ अधिक है तो प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह सभी सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं पर स्वतंत्रतापूर्वक विचार करे और निर्णय ले। यह सभी हो सकता है जबकि जनता को ऐसा करने की शिक्षा दी जाये।

(5) संस्कृति का प्रसार और संरक्षण :-

किसी भी राज्य में आदर्शो को तभी प्राप्त किया जा सकता है। जबकि परिवर्तन के साथ-साथ निरन्तरता बनी रहे। यह निरंतरता तभी बनी रह सकती है। जबकि शिक्षा के द्वारा सामाजिक विरासत को नई पीढ़ी को सौंपा जाये। अस्तु संस्कृति के प्रसार और संरक्षण

के लिए शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है।

(6) **शोषण का विरोध :-**

जनतंत्र के आदर्श सब प्रकार के शोषण के विरूद्ध है। राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक सभी क्षेत्रों में शोषण का उन्मूलन करने के लिए सार्वभौम और अनिवार्य शिक्षा की आवश्यकता है। इसके अभाव में न तो शक्तिशाली व्यक्ति ही शोषण से बाज आयेंगे और न शोषित व्यक्ति ही अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होकर शोषकों से मोर्चा ले सकेंगे। जिस राज्य में जनता पर्याप्त रूप से शिक्षित होती है वहाँ नर-नारी स्वयं प्रत्येक क्षेत्र में अपने अधिकारों की रक्षा करते है और उनके लिए संघर्ष करते है। अस्तु शिक्षा का प्रसार जनतंत्र को बनाये रखने के लिए सबसे अधिक ठोस आधार है।

1.10 जनतंत्रीय शिक्षा के लक्ष्य :-

अमरीकन शिक्षाशास्त्री हैण्डरसन ने जनतंत्रीय समाज में शिक्षा के निम्नलिखित लक्ष्य माने है :-

(1) युवा व्यक्तियों में मानव व्यक्तित्व के लिए सम्मान उत्पन्न करना।

(2) विद्यार्थियों में शिक्षा के उपकरणों और समय तथा योग्यता के अनुसार सामाजिक विरासत पर अधिकार उत्पन्न करना।

(3) शिष्यों को आत्मनुशासन की कठिन कला सीखने और जनकल्याण की ओर ध्यान देने में सहायता करना।

(4) प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं चिंतन करने की योग्यता उत्पन्न करना। परंतु यह चिंतन सदैव स्थापित सत्य के अन्तर्गत ही होना चाहिए।

(5) युवा व्यक्तियों को जनतंत्र को समझने और उन्नत समाज का विकास करने को उनके जीवन का लक्ष्य बनाने में सहायता करना।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

संक्षेप में जनतंत्रीय शिक्षा के सामान्य लक्ष्य निम्नलिखित है:-

(1) संकलित व्यक्तियों का निर्माण :-

जनतंत्री की सफलता नर-नारियों में संकलित और समन्वित व्यक्तियों का निर्माण करने में है। इसके लिए बहुमुखी शिक्षा की आवश्यकता है।

(2) व्यक्ति का आर्थिक कल्याण :-

जनतंत्रीय शिक्षा को प्रत्येक व्यक्ति को जीविकोपार्जन के योग्य बनना चाहिए।

(3) रूचियों का विकास :-

जनतंत्रीय शिक्षा का एक लक्ष्य जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में रूचियों का निर्माण करना है।

(4) अच्छी आदतों का विकास :-

अरस्तू को उन तीन चित्रों में से एक माना है जो कि मनुष्यों को भला और नैतिक बनाती है। अच्छी आदतें सुखी जीवन का आधार है। अरस्तु जनतंत्र के नागरिकों में शिक्षा के द्वारा अच्छी आदतें उत्पन्न की जानी चाहिए।

(5) सामाजिक दृष्टिकोण का विकास :-

जनतंत्र में समुदायिक भावना का विशेष महत्व है। शिक्षा की प्रक्रिया के द्वारा बालक / बालिकाओं का सामाजिकरण करके उनमें सामाजिक दृष्टिकोण का विकास जनतंत्रीय शिक्षा का एक प्रमुख्य लक्ष्य।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

(6) कुशलता प्राप्त करना :-

किसी भी काम में कुशलता से तात्पर्या से उस काम को अधिक मात्रा और गुण में तथा कम थके हुए कर लेने से है। शिक्षा के द्वारा नागरिकों में उन सब कामों में कुशलता निर्माण की जानी

चाहिये जो उन्हें जनतंत्र के नागरिक के रूप में करते है।

(7) नागरिकता की शिक्षा :-

नागरिकता की शिक्षा की, व्याख्या के लिए प्राचीन यूनानी जनतंत्रों में नागरिकों द्वारा ली जाने वाली शपथ का अवलोकन लाभदायक है। यह इस प्रकार है, हम किसी प्रकार की बेईमानी अथवा कायरता के कार्य से अपने इस नगर के आदर्शों और सामाजिक वस्तुओं के लिए अकेले और अनेक के साथ मिलकर संघर्ष करेंगे। हम नगर के कानूनों को मानेंगे और सेवा करेंगे तथा जो उनका उल्लंघन करने को अथवा उन्हें शून्य बना देने को प्रवृत्त है उनमें उनके प्रति सम्मान उत्पन्न करने के लिए भरसक प्रयास करेंगे। हम जनता में नागरिक विचार की भावना तीव्र करने का अविरल प्रयास करेंगे। हम जनता में नागरिक विचार की भावना तीव्र करने का अविरल प्रयास करेंगे इस प्रकार इन सब तरीकों से हम अपने नगर को जैसा कि हमें वह दिया गया था। उससे कम नहीं बल्कि अधिक महान बेहतर और सुंदर बनाकर देंगे। कहना न होगा कि यदि यह शपथ आधुनिक जनतंत्र का प्रत्येक नागरिक ग्रहण करें तो जनतंत्र की सफलता में कोई संदेह नहीं रह सकता।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

1.11 भारत में जनतंत्र के लिए शिक्षा :-

शिक्षा के उपरोक्त महत्व को भारतीय जनतंत्र में भी लागू किया जा सकता है। जैसा कि पीछे बतलाया जा चुका है भारत में जनतंत्र की परम्परा अति प्राचीन है। देश को स्वतंत्रता मिलने के बाद भारत में जनतंत्रीय संविधान की स्थापना हुई। जनवरी (1938) में पंडित जवाहरलाल नेहरू लिखा था, "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस स्वतंत्रता और जनतंत्रीय राज्य की माँग कर ली है। भारत में जनतंत्रीय संविधान की स्थापना हुई। जनवरी 1938 में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने लिखा था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस स्वतंत्रता और जनतंत्रीय राज्य की मांग करती है। भारत में जनतंत्रीय सरकार

की स्थापना से यह लक्ष्य पूरा हुआ। भारतीय संविधान में यह प्रतिज्ञा की गयी हम भारत के लोग भारत में एक सर्व सत्ताधिकारी जनतंत्रीय लोकतंत्र की स्थापना करने का कष्ट पूर्वक निश्चय करके और उसके समस्त नागरिकों के लिए, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति विश्वास आस्था और पूजा कि स्वतंत्रता स्थिति और अवसर की समानता प्राप्त करने के लिये और उन सब में व्यक्ति का सम्मान तथा राष्ट्र की एकता बनाये रखने के लिये मातृत्व का विकास करने के लिये अपनी संविधान परिषद में नवंबर 26, 1949 को यह संविधान अंगीकार अधिनियमित और ग्रहण करते है। उपरोक्त शब्दों से स्पष्ट है कि भारतीय संविधान जनतंत्र के पीछे बतलाये गये मूल तत्वों के आधार पर देश में लोकतंत्र की स्थापना करना चाहता है। सबके के लिए प्रत्येक नागरिक को शासन में भाग लेना है। प्रत्येक नागरिक को मतदान करने और चुने जाने का अधिकार है। सबको स्थिति और अवसर की समानता मिली हुई है। धर्म, जाति, वर्ण, सम्प्रदाय और लिंग के आधार पर नागरिकों में कोई भेद–भाव नहीं किया जाता सरकार, जनता और उसके प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी है। सभी वयस्क नर–नारियों को मत देने का अधिकर है।

जनतंत्र के इस लक्ष्य को प्राप्त करने के देश में शिक्षा की आवश्यकता है और इस दिशा में शिक्षा की आवश्यकता है और इस दिशा में प्राचीनकाल में भारत संसार के किसी भी अन्य देश से पीछे नहीं रहा। डॉ. एफ.डब्ल्यू. थॉमस के शब्दों में, ''शिक्षा भारत में कोई नई वस्तु नहीं है। ऐसा कोई भी अन्य देश नहीं है जहाँ पर सीखने का प्रेम इतने आदिकाल से उत्पन्न हुआ है, अथवा उसने इतना अधिक स्थायी ओर शक्तिशाली प्रभाव डाला हो/वैदिककाल के सरल कवियों से लेकर आज के बंगाली दार्शनिक तक अध्यापकों और विद्वानों की एक अविरल परम्परा बनी रही है।'' भारतीय संविधान में न केवल जनतंत्रीय आदर्शों को स्थान दिया गया है, बल्कि शिक्षा को

Regional Institute of Education LIBRARY

LIBRARY

राज्यों को यह आदेश दिया गया है कि वे संविधान के लागू होने की तारीख से 10 वर्ष के अंदर 14 वर्ष तक की आयु के सभी बालक/बालकाओं के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रबंध करें, देश को स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद भारतीय शिक्षा ने एक नये युग में पदार्पण किया। भारतीय संविधान की 29-30 धाराओं में सभी नागरिकों को शिक्षा और सांस्कृतिक विकास के संबंध में मौलिक अधिकार दिये गये है। धारा 29 के अनुसार भारत में अथवा उसके किसी भी भाग में रहने वाले नागरिकों के किसी भी वर्ष को अपनी विशिष्ट भाषा, लिपि और संस्कृति को बनाये रखने का अधिकार रहेगा। केवल धर्म, प्रजाति, जाति, भाषा, अथवा इस प्रकार के किसी भी अन्य आधार पर किसी भी नागरिक को राज्य द्वारा स्थापित अथवा राज्य से सहायता लेने वाली शिक्षा संस्था में प्रवेश का निषेध नहीं किया जा सकता है। धारा 30 के अनुसार सभी अल्पसंख्यकों चाहे वे धर्म पर आधारित हों अथवा भाषा पर अपनी पसन्द की शिक्षा संस्थाओं को स्थापित करने और चलाने का अधिकार होगा। राज्य भाषा अथवा धर्म के अल्पसंख्यकों द्वारा प्रबधित किसी भी शैक्षिक संस्था को आर्थिक सहायता देने से इंकार नहीं करेगा भारतीय संविधान की धारा 45 और 46 में राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के शिक्षा के विषय में नीति निर्धारित की गई है। धारा 45 के अनुसार राज्य संविधान के प्रारंभ होने से दस वर्ष के अंदर समस्त बालकों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का प्रयास करेगा, जब तक वे 14 वर्ष की आयु पूरी कर लें। धारा 46 के अनुसार राज्य जनता के पिछड़े हुए वर्गो और विशेषतया परिगणित जातियों तथा परिगणित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों का विकास करने के लिए विशेष रूप से संध्यान रखेगा और उनकी सामाजिक अन्याय और सब प्रकार के शोषण से रक्षा करेगा। भारतीय संविधान संघीय सरकार की स्थापना करता है। इसमें केन्द्रीय और राज्य सरकारों के कार्य बंटे हुये है। शिक्षा के क्षेत्र में कुछ अधिकार संघीय सरकार के

है तो अन्य अधिकार राज्यों को दिये गये है। अस्तु देश की शैक्षिक प्रगति में केन्द्र और राज्यों के परस्पर समायोजन की आवश्यकता है आधुनिक भारतीय राज्य एक कल्याणकारी राज्य है। नागरिकों का सर्वांगीण कल्याण उसका लक्ष्य है। यह कल्याण शिक्षा के माध्यम से ही किया जा सकता है। यही कारण है कि नेतागण सब कहीं देश के भविष्य को उज्जवल बनाने के लिये शिक्षा के विकास पर जोर देते है।

1.12 माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार शिक्षा के लक्ष्य

देश की वर्तमान शिक्षा प्रणाली किन जनतंत्रीय आदर्शों को लेकर चल रही है यह माध्यमिक शिक्षा आयोग में बतलाये गए शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्यों से स्पष्ट होता है।

Regional College of Education LIBRARY Bhopal

(1) **जनतंत्रीय नागरिकता का विकास** :- जनतंत्री की सफलता इस बात पर निर्भर है कि नागरिक अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति कहाँ तक जागरूक है और अपने उत्तरदायित्व का कहाँ तक पालन करते हैं शिक्षा का लक्ष्य नागरिकों में इसी योग्यता का विकास करना है। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति चिंतन करने और भले-करे, में अंतर करके निर्णय लेने के योग्य हो जाता है। वह सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक प्रश्नों को समझ सकता है और उनको हल करने की दिशा में विचार कर सकता है। वह देश की आवश्यकताओं को समझकर यह निर्णय कर सकता है। कि देश का भविष्य कौन से नेताओं और किस राजनैतिक दल के हाथों में अधिक सुरक्षित रहेगा। वह अपने विचारों और सुझावों को भाषणों, लेखों आदि विभिन्न माध्यमों से अभिव्यक्त कर सकता है। वह नये-नये आन्दोलनों का संगठन कर सकता है, और लोकतंत्र की विभिनन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नाना प्रकार की समितियाँ बना सकता है। राज्य का कर्तव्य है कि शिक्षा संस्थाओं में बालक/ बालिकाओं को योग्य नागरिक बनाने के पाठ्यक्रम की ओर निषेध ध्यान दिलाये।

(2) कुशल जीवन – यापन की कला का प्रशिक्षण :–

जनतंत्र की सफलता इस बात पर निर्भर है कि सामुदायिक जीवन में जनतंत्रीय आदर्शों को प्राप्त किया जाये। इसके लिए शिक्षा के द्वारा व्यक्ति का सामाजिकरण करना आवश्यक हैं नागरिकों में सामुदायिक भावना, सहयोग, अनुशासन, सहनशीलता, सहानुभूति, मातृत्व आदि सामाजिक गुणों का विकास किया जाना चाहिए। उनमें सामाजिक न्याय के प्रति आस्था और अन्यय के प्रति विद्रोह उत्पन्न किया जाना चाहिये। यह काम शिक्षा के ही द्वारा हो सकता है। शिक्षा व्यक्तियों को परस्पर अनुकूलन में सहायता देती है। शिक्षित व्यक्ति उदार और सहिष्णुता है। वह मतभेद, होते हुए भी भिन्न मतवालों के साथ समायोजन कर सकता है। अस्तु शिक्षा ही जनतंत्र के मार्ग की बाधाओं को दूर करने और भाषा, जाति, प्रजाति, धर्म, लिंग आदि के आधार पर विभिन्न वर्गों के परस्पर समायोजन का एकमात्र साधन है।

(3) व्यक्तित्व का विकास :–

किसी भी देश में जनतंत्रीय आदर्श को उसी सीमा तक प्राप्त किया जा सकता है। जहाँ तक देश में विकसित व्यक्तित्व के नर–नारी पाये जाते है। व्यक्तित्व के विकास में व्यक्तियों का शारीरिक मानसिक सामाजिक नैतिक और आध्यात्मिक सभी प्रकार का विकास सम्मिलित है। इस सर्वांगीण विकास सम्मिलित है। इस सर्वांगीण विकास की प्रक्रिया ही शिक्षा है। अस्तु शिक्षा के द्वारा भिन्न–भिन्न क्रियाओं के माध्यम से शिक्षार्थी के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का विकास किया जाना चाहिए। इस बात को ध्यान में रखकर आधुनिक विद्यालयों में पुस्तकीय पाठ्यक्रम अतिरिक्त नाना प्रकार के पाठ्यक्रमेत्तर कार्यक्रमों की ओर ध्यान दिया जाता है।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

(4) व्यावसायिक कुशलता का विकास :–

माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार शिक्षा का एक अन्य

उद्देश्य शिक्षार्थियों की व्यवसायिक का विकास है। आर्थिक उन्नति के वगैर कोई भी देश किसी भी प्रकार की उन्नति नहीं कर सकता। राज्य का सबसे पहला कर्तव्य यह है कि वह ऐसी शिक्षा की व्यवस्था करे जिससे शिक्षार्थी किसी न किसी प्रकार का व्यवसाय ग्रहण करके जीविकोपार्जन कर सके और देश के आर्थिक विकास में योगदान दे सकें। देश को कुशल कारीगरों, इंजीनियरों, डाक्टरों, प्राध्यापकों और प्रशासकों की आवश्यकता है। प्रत्येक बालक को उसकी रूचि और योग्यता के अनुसार व्यवसाय चुनने का अवसर मिलना चाहिए और उस व्यवसाय में कुशलता प्राप्त करने के लिए उसे समुचित शिक्षा और प्रशिक्षण मिलना चाहिये।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

(5) **नेतृत्व का विकास :-**

लोकतंत्र की सफलता योग्य नेताओं पर निर्भर होती है। लोकतंत्र विकेन्द्रीत राज्य होती है। इसलिए उसमें विभिन्न सनो पर नेताओं की आवश्यकता होती है। लोकतंत्रीय सरकार जनता के प्रतिनिधि चलाते है। इन प्रतिनिधियों में नेतृत्व के विशेष गुण होने चाहिए। जनतंत्र के राजनैतिक सामाजिक, आर्थिक, कलात्मक, वैज्ञानिक सभी क्षेत्रों में प्रगति के लिए योग्य नेतृत्व का विकास आवश्यक है। नेतृत्व का यह विकास शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए क्योंकि इसके बिना शिक्षा जनतंत्र में योगदान नहीं दे सकती। विद्यालयों में विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमों और पाठ्यक्रमोत्तर कार्यक्रमों के द्वारा बालक/बालिकाओं से नेतृत्व की प्रतिभा का विकास किया जाना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा निर्धारित जनतंत्रीय शिक्षा के उपरोक्त लक्ष्यों के अतिरिक्त भारतीय जनतंत्र को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के कुछ अन्य लक्ष्य पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। वास्तव में प्राथमिक और विश्वविद्यालय इन तीनों स्तरों पर शिक्षा के उद्देश्यों में कुछ न कुछ अंतर हो जाता है। इस बात को विभिन्न भारतीय

शिक्षा आयोग ने स्वीकार किया है। प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का लक्ष्य ज्ञान के विभिनन क्षेत्रों के मूलतत्वों को अत्यंत सरल ढ़ंग से उपस्थित करके बालक के मस्तिष्क का विकास करना और उसे अपनी समस्त शारीरिक मानसिक नैतिक गामक और अन्य रचनात्मक शक्तियों के विकास का पूर्ण अवसर देना है। इस स्तर पर बालक के मानसिक विकास के साथ-साथ उसके शारीरिक विकास पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए और शिक्षा ऐसी होनी चाहिये कि बालक पर विशेष बोझ न पड़े।

माध्यमिक स्तर पर प्रत्येक किशोर व्यक्ति की विशेष रूचियों और योग्यताओं का पता लगाना चाहिए शिक्षा व्यवस्था में समाज के सामान्य कल्याण के साथ-साथ प्रत्येक व्यक्ति के आत्म-साक्षात्कार की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

1.13 पाठ्यक्रम में सुधार :-

जनतंत्रीय आदर्शों को प्राप्त करने के लिए शिक्षा के पाठ्यक्रम में सभी स्तरों पर परिवर्तन करने की आवश्यकता है। इस संबंध में निम्नलिखित बातें आवश्यक है :-

(1) **बहुमुखी पाठ्यक्रम :-**

बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए और शिक्षा के पीछे बतालायें गये विभिन्न उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये प्राथमिक माध्यमिक और विश्वविद्यालय सभी स्तरों पर पाठ्यक्रम बहुमुखी होना चाहिए। भारतीय शिक्षा व्यवस्था में इस और ध्यान दिया गया है यद्यपि पर्याप्त सुविधाओं के अभाव में सब प्रकार के पाठ्यक्रम नहीं चलाये जा सकते।

(2) **नमनीयता और विवधता :-**

विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का कार्यक्रम लचीला और विविध होना चाहिए जिससे विशेषतया माध्यमिक और विश्वविद्यालय स्तर पर

विद्यार्थी अपनी विशिष्ट रूचियों और योग्यताओं के अनुसार न्यूनाधिक परिवर्तन करने के लिए उसका नमनीय होना आवश्यक है।

(3) **स्थानीय आवश्यकताओं पर आधारित :-**

भारत एक विशाल देश है जहाँ पर प्रजाति भाषा वेश-भूषा आदि के भारी भेद दिखलाई पड़ते है। शिक्षा के पाठ्यक्रम में स्थानीय आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाना चाहिए देश के विभिन्न भागों में बसने वाले बालकों को प्राथमिक शिक्षा उनकी शिक्षा उनकी मातृभाषा के माध्यम से दी जानी चाहिए। माध्यमिक और विश्वविद्यालय स्तर पर उन्हें मातृभाषा के साथ-साथ राष्ट्रीय भाषा हिंदी और अन्तर्राष्ट्रीय भाषा अंग्रेजी के माध्यम से भी अध्ययन करने का अवसर दिया जाना चाहये। अंग्रेजी जाने बिना विद्यार्थी ज्ञान के एक बहुत बड़े भंडार से अनभिज्ञ रह जायेगें।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

(4) **सामाजिक भावना का निर्माण :-**

पाठ्यक्रम में ऐसे कार्यक्रम अवश्य सम्मिलित किये जाने चाहिये जिनसे विद्यार्थियों में सामुदायिक भावना का निर्माण हो किंतु वह सामुदायिक भावना राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना के अनुकूल होनी चाहिए।

(5) **जीविकोपार्जन :-**

पाठ्यक्रम में प्रत्येक विद्यार्थी को ऐसे विषय सीखने का अवश्य अवसर मिलना चाहिए वह आगे चलकर अपनी विशिष्ट योग्यताओं के अनुसार जीविकोपार्जन के योग्य बन सके। व्यावसायिक और प्रौद्योगिक विषयों के पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वास्तविक परिस्थितियों में आगे चलकर शिक्षार्थियों को कौन-कौन से काम करने पड़ेगे और पाठ्यक्रम उसमें कहाँ तक सहायक होगा।

1.14 विद्यालय प्रशासन में सुधार :-

भारत में प्रजातंत्रीय आदर्शों को प्राप्त करने के लिए विद्यालयों के प्रशासन में निम्नलिखित सुधार किया जाना आवश्यक है :-

(1) **शिक्षकों को अधिक अधिकार :-**

विद्यालय की नीति-निर्धारण करने, पाठ्यक्रम का चुनाव और विद्यालय से संबंधित अन्य बातों में शिक्षकों को अधिक अधिकार दिये जाने चाहिए, ताकि उन्हें स्वतंत्रता का अनुभव हो और वे पूरे मनोयोग से कार्य कर सकें।

(2) **विद्यालय में जनतंत्रीय वातावरण :-**

शिक्षक - शिक्षार्थी संबंध और शिक्षकों के प्रधानाध्यापक अथवा विद्यालय के प्रबंधकों से संबंध अथवा प्रधानाध्यापकों और विश्वविद्यालय के प्रशासकों तथा उपकुलपति के संबंध में सहयोग और भ्रातृत्व की भावना सबसे ऊपर रखी जानी चाहिए। अनुशासन बनाये रखते हुये भी समानता के सिद्धात को बनाए रखना आवश्यक है। दोष दिखाई पड़ने पर उसका निराकरण निरंकुशता से नहीं, जनतंत्रीय विधियों से किया जाना चाहिए।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

(3) **शिक्षकों को अधिक स्वतंत्रता :-**

पाठ्यक्रम निर्धारण, शिक्षण विधि अध्ययन, अध्यापन, अनुसंधान और शोध आदि के क्षेत्रों में कार्य करने के लिए शिक्षकों को स्वतंत्रता दी जानी चाहिए क्योंकि स्वतंत्रता के बिना क्रियात्मक और रचनात्मक कार्य नहीं हो सकते। शिक्षक चिंतन, विज्ञान, साहित्य और कला के क्षेत्र में शिक्षकों द्वारा नये-नये विकास संभव है।

(4) खेद का विषय है कि ये सुधार बहुत कम विद्यालयों में अपनाये गये हैं।

1.15 शिक्षण विधि में सुधार :-

जनतंत्र में विद्यालय में शिक्षण विधि भी जनतंत्रीय होनी

चाहिए। इस संबंध में निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं :-

(1) **सहयोग को प्रोत्साहन :-**

विद्यालय में शिक्षार्थियों में परस्पर सहयोग और शिक्षक-शिक्षर्थी तथा प्राध्यापक और प्रधानाध्यापक में सहयोग से ही समस्त कार्य किये जाने चाहिए। इससे जनतंत्र के लिए आवश्यक सहयोग की भावना और सामुदायिक भावना का निर्माण होता है।

(2) **क्रियाशीलता पर जोर :-**

जनतंत्रीय शिक्षा के सबसे प्रसिद्ध व्याख्या जान डिवी के अनुसार बालक को क्रिया करके सीखना चाहिए। शिक्षा की प्रक्रिया में सक्रिय भाग लेने से विद्यार्थी आत्म-नियंण आत्मानुशासन और आत्म-प्रेरणा का पाठ सीखते है जिसको जनतंत्र की सफलता में बड़ी आवश्यकता पड़ती है।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

(3) **स्वतंत्रता :-**

स्वतंत्रता जनतंत्र का मूल सिद्धांत है। अस्तु, जनतंत्रीय शिक्षण विधि में बाहरी दबाव का कोई स्थान नहीं है। उसमें शिक्षाथियों का किसी भी प्रकार की आलोचना करने का अधिकार होता है। जनतंत्रीय शिक्षण में बालक को स्वतंत्र चिंतन के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। आधुनिक बाल शिक्षण विधियों जैसे - मान्टेसरी पद्धति, प्रोजेक्ट प्रणाली, डाल्टन प्रणाली, ह्यू रिस्टिक प्रणाली आदि में बालकों की स्वतंत्रता को विशेष महत्व दिया गया है। जनतंत्रीय शिक्षा विधियों में अध्यापक केवल पथ-प्रदर्शक मात्र होता है। उसके प्रोत्साहन, परामर्श और निर्देश का लाभ उठाकर बालक स्वयं ज्ञान के मार्ग में आगे बढ़ते है।

(4) **सर्वांगीण विकास पर जोर :-**

जनतंत्रीय शिक्षा में शिक्षण विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जिनसे बालक के किसी भी पहलू का विकास कुंठित न हो और उसका

सर्वांगीण विकास संभव हो सके क्योंकि जनतंत्रीय नागरिक किसी भी पहलू में पिछड़ जाने पर उस क्षेत्र में अपने उत्तरदायित्व का पालन नहीं कर सकता। जहाँ जनतंत्र नागरिक को अधिक अधिकार देता है वहाँ अन्य शासन-प्रणालियों ऐसी होनी चाहिए कि बालकों में आत्म-निर्भरता, कर्तव्य पालन, उत्तरदायित्व निभाने आदि की योग्यता उत्पन्न हो।

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

1.16 अनुशासन की स्थापना :-

जनतंत्रीय शिक्षा प्रणाली में अनुशासन का विशेष महत्व है क्योंकि विद्यार्थियों को आगे चलकर स्वयं शासन में भाग लेना है और जनतंत्र को चलाना है। अन्य प्रकार की शासन प्रणालियों में यह आवश्यक नहीं होता। अनुशासन कोई बाहर से लादी जाने वाली चीज़ नहीं है। सच्चा अनुशासन आत्मानुशासन है, वह आत्मनियंत्रण है वह समाज अथवा समूह के नियमों के अनुसार अपनी प्रवृत्तियों में परितर्वन करना है। जनतंत्रीय समाज में नागरिकों का अनुशासित होना अत्यंत आवश्यक है। यह तभी हो सकता है जबकि विद्यालयों में भी अनुशासन पर जोर दिया जाये। विद्यालयों में अध्यापक को सभी के साथ निष्पक्षता से व्यवहार करना चाहिए। विद्यालय के अधिकतर कार्य अध्यापक की देख-रेख में स्वयं विद्यार्थियों को करने चाहिए। स्वायत्त शासन संस्थायें-विद्यार्थी संघ, विद्यार्थी परिषद तथा विद्यार्थी लोकसभा आदि संगठित की जानी चाहिए जिनमें काम करके विद्यार्थियों को देश की जनतंत्रीय व्यवस्था में सक्रीय योगदान देने का प्रशिक्षण प्राप्त हो। विद्यालय में विद्यार्थियों के कार्यो पर रोकथाम उनकी अपनी संस्थाओं द्वारा होनी चाहिए। इस प्रकार का सामाजिक नियंत्रण ही उन्हें अनुशासन सिखाता है। शिक्षक को स्वयं अनुशासन का आदर्श उपस्थित करना चाहिए। सरकार को शिक्षा संस्थाओं में अनावश्यक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। अंत में, शिक्षक, संरक्षक और शासक सभी के सहयोग से ही विद्यालय में ऐसा वातावरण बनाया

जा सकता है जिससे शिक्षार्थियों में अनुशासन उत्पन्न हो।

1.17 समस्या कथन :-

''प्रारंभिक विद्यालयों के शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्य का अध्ययन''

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

1.18 समस्या का सीमांकन :-

(1) प्रस्तुत अध्ययन में महाराष्ट्र के अमरावती शहर को ही शामिल किया गया है।

(2) इस अध्ययन में प्रारंभिक विद्यालयों के मात्र 100 शिक्षकों को ही चुना गया है।

(3) प्रस्तुत अध्ययन में शिक्षक एवं शिक्षिकाओं दोनों का ही चयन किया गया है।

1.19 शोध के उद्देश्य :-

(1) प्रारंभिक शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(2) पुरूष शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(3) स्त्री शिक्षिकाओं में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(4) शिक्षक, शिक्षिकाओं में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अंतर ज्ञात करना।

(5) डी.एड. शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(6) बी.एड. शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(7) डी.एड. और बी.एड. शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अंतर ज्ञात करना।

(8) शहरी शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(9) ग्रामीण शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(10) शहरी और ग्रामीण शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अंतर

ज्ञात करना।

(11) संयुक्त कुम्टुंब के शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(12) विभक्त कुटुंम्ब के शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।

(13) संयुक्त ओर विभक्त कुम्टुंब के शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों का अंतर ज्ञात करना।

1.20 **परिकल्पनाएँ** :-

(1) शिक्षक, शिक्षकांओं में जनतंत्रात्मक मूल्यों के अध्ययन के प्रति सार्थक अंतर नहीं है।

(2) डी.एड. ओर बी.एड. शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों के प्रति सार्थक अंतर नहीं है।

(3) ग्रामीण और शहरी शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों के प्रति सार्थक अंतर नहीं है।

(4) संयुक्त और विभक्त कुटुम्ब के शिक्षकों में जनतंत्रात्मक मूल्यों के प्रति सार्थक अंतर नहीं है।

LIBRARY